हिन्दी साहित्य लेखन में स्त्री विमर्श की दशा एवं दिशा

साहीन खान,
शोधार्थी–हिन्दी,
जीवाजी विश्वविद्यालय,ग्वालियर(म.प्र.)

प्रो0 (डॉ0) डी0 आर0 राहुल,
प्राचार्य,
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,दतिया,म.प्र

शोध सारांश

अधिकतर विद्वानों का यह मानना है कि स्त्री विमर्श वास्तव में पुरुष विरोधी विमर्श है। यह उनका पूर्वाग्रह है। इससे निजात की जरूरत है। वास्तव में स्त्री लेखन में निम्न प्रमुख मुद्दे प्रमुखता से आते हैं:– स्त्रियों की पीड़ा, स्त्रियों की महत्वकांक्षाएँ,परिवार तथा समाज का संघर्ष, भक्ति रचनाएँ एवं स्त्रीवादी रचनाएँ इत्यादि। इस तथ्य को यदि नारीवादी लेखन से जोड़कर देखें तो कुछ तथ्य और सामने निकलकर आयेंगे। वर्तमान में नारीवादी लेखन की आवश्यकता इसलिए महसूस हुई, क्योंकि सामान्य लेखन अर्थात परम्परावादी लेखन ने नारीवादी लेखन की पूरी उपेक्षा की। इसी लिए स्त्री लेखन की उत्पत्ति होनी आवश्यक थी क्योंकि सामान्य लेखन में स्त्री का हित विलोपित था। सामान्य तौर पर ऐसा माना जाता है कि स्त्री लेखन (विमर्श भी) चौतरफा संघर्ष करता है– सवर्ण समाज, परिवार, सामान्य पुरुष एवं सामान्य स्त्री विमर्श आदि। लेकिन सामान्य स्त्री विमर्श ने इस विमर्श को लेकर या तो चुप्पी साध ली या विमर्श मानने से ही इंकार कर दिया। इस कारण यह विमर्श और उग्र होता गया। हिन्दी भाषा में कई लेखिकाएँ स्त्री विमर्श हेतु अपनी लेखनी से समाज को अवगत करा रही हैं। लेखनी की उग्रता ने प्राकृतिक नियमों तक को चुनौती दे डाली है।

Key words : *हिन्दी साहित्य,परम्परागत लेखन,परम्परा एवं प्रासंगिकता ,स्त्री विमर्श,दशा एवं दिशा।*

वर्तमान से ही नहीं वरन् सदियों से हिन्दी साहित्य में स्त्रियों की भूमिका अत्यन्त सीमित रही है। वर्तमान समय में भी स्त्री चिन्तन और सर्जना के बीचों–बीच खाई खड़ी दिखाई देती है। पश्चिम के प्रभाव और निजी आत्मबोध के कारण आज नई स्त्री चेतना का विकास हुआ है। बंगाल और महाराष्ट्र के नव जागरण के फलस्वरूप सती–प्रथा, बालविवाह, वेश्यावृत्ति पर रोक लगी। जब भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पहली बार ''बालबोधिनी'' नामक स्त्री पत्रिका निकाली तो उसका पूरी शक्ति से विरोध किया गया। द्विवेदी काल में उपेक्षित स्त्री पात्रों के प्रति हरिऔध जी, मैथिलीशरण गुप्त जी जैसे विद्वान कवियों का ध्यान गया और उन्होने पूरी संवेदना और सहानुभूति के साथ उनका महानता का चित्रण किया। छायावादी कवियों में से जयशंकर 'प्रसाद' जी ने स्त्री को ''श्रद्धा'',सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने ''ज्योतिर्मयी''सुमित्रानन्दन पंत जी ने ''देवी'', ''माँ'', ''सहचरि'', प्राण इत्यादि कहकर सम्मानित किया। प्रयोगवादियों ने स्त्री को कुछ 'बोल्ड' तो प्रयोगवादियों ने ''बल्गर'' तक की संज्ञा दे डाली।

स्त्री विमर्श परम्परा एवं प्रासंगिकता के लिये ज्ञान चेतना और अधिकार के साथ ही साथ सम्मान के लिए निरन्तर संघर्षरत स्त्री जीवन को नई दिशा के लिये स्त्री विमर्श से बेहतर क्या कुछ हो सकता है। दुख की वह कौन सी कड़ी है जो बार–बार लेखन के सामने आती है। स्त्रियों के लेखन में स्व अस्तित्व पर सर्वाधिक जोर है। सीमोन द वोउवा का भी मानना है कि ''ज्यों–ज्यों

नारियाँ अपने स्व अस्तित्व पर जोर देंगी। उनसे सम्बन्धित काल्पनिक और अवास्तविक कथाएँ लुप्त होती जायेंगी, फिलहाल नारी का कल्पनिक रूप ही हर मानव के हृदय में है।''

आधुनिक युग की ''मीरा'' कही जाने वाली महादेवी वर्मा को जेवरों की चाहत न होकर स्व की भूख अधिक है। ''मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरों न कोई।'' स्व यह है उसे आँगन नही वह (स्व) चाहिये जो उसे मिलना चाहिये। ''औरत की आत्मा की परवाह किसी को नहीं। मीरा स्त्री विमर्श परम्परा एवं प्रासंगिकता की बड़ी पैरोकार हुई, सीमोन तो बाद में आईं। लेकिन महादेवी की ''मैं नीर भरी दुख की बदली'' बरसकर अपना होना जरूर जता गई है। वे अपनी समस्त नारी जाति का दुख महसूस करती हैं मिलकर मांगेगें तो आकाश मिलेगा। देहरी अपनी अपनी आकाश सबका। यह स्त्री संघर्ष में दो कड़ी आगे हैं। सरोजनी नायडू और सुभद्राकुमारी चौहान। स्त्रियाँ पुरूष विरोधी नहीं है। स्त्रियाँ मुक्ति चाहती हैं पुरूष की पशुता से।''

हिन्दी साहित्य के सभी रूपों (नाटक, कविता, कहानी, निबन्ध, उपन्यास, एकांकी, यात्रावृत्त एवं संस्मण आदि) में महिलाओं की सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं परम्परागत स्थितियों का वर्णन बखूबी देखने को मिलता है। कोई भी समय या साहित्य ऐसा नहीं जिसमें स्त्री की उपस्थिति न हो। यहाँ तक कि रामायण एवं महाभारत जैसे ग्रन्थों में भी बिना स्त्री के जैसे किसी घटना की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। हो भी क्यों ना? जब समस्त जगत का निर्माण ही स्त्री–पुरूष दोनों के योग से होता है तो एक को छोड़कर दूसरे की कल्पना करना भी व्यर्थ ही होगा।

आदिकाल से लेकर वर्तमान तक स्त्री की स्थिति के विषय में सभी पुरूष एवं स्त्री–लेखक–लेखिकाओं ने अपने–अपने तरीके से उसे देखने, समझने एवं प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आदिकाल में स्त्रियों को केवल सौन्दर्य एवं भोग की दृष्टि से देखा जाता था। उस समय चाहे नगर हो या गाँव स्त्रियों में शिक्षा की बहुत कमी थी। राजा दूसरे की कन्या या पत्नी की सुन्दरता सुनकर उसे पाने के लिए उससे प्रस्ताव रखता था कि या तो इसे स्वेच्छा से हमें दे दो या युद्ध करो। मध्यकालीन समय में अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिवर्तन हुए। इस समय लोगों का जीवन स्तर इतना उत्तम नहीं था जितना होना चाहिए। इसका सीधा सा कारण यह था कि यह काल सांस्कृतिक एवं सामाजिक रूप से बहुत उथल–पुथल का काल रहा। मध्यकाल में जब पुरूष की दशा और दिशा सन्तोषजनक नहीं थी तो नारी तो बहुत दूर की चीज है। क्योंकि भारतीय समाज पुरूष प्रधान समाज रहा है। मध्यकालीन समय में नारी के विषय में सन्तों की अपनी–अपनी धारणा रही। किसी ने स्त्री को पुरूष के विकास मार्ग का अवरोधक माना तो किसी ने स्त्री को संसार का निर्माण करने वाली देवी के रूप में। स्त्री का देवी रूप तो भारतीय समाज में बहुत पुराना है। इसके विषय में कहा गया है कि 'जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं।' अर्थात् यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता। सन्त कवियों की दृष्टि नारी के प्रति बहुत स्पष्ट एवं पारदर्शी रही है। सन्त कवियों ने नारी को समाज का अनिवार्य अंग माना है। सन्त कवि नारी के गुण एवं दोष दोनों को बहुत सहज ढ़ंग से व्यक्त करते हैं। इन्होंने न तो आँख बन्द करके नारी की प्रशंसा की है और न आँख मूँदकर उसकी निन्दा। सन्तों ने ऐसी नारी को समाज के लिए कोढ़ के रूप में माना है जो पुरूष को पतन के मार्ग पर ले जाती है।

कृष्णभक्त सन्तों में मीराबाई का स्थान वास्तव में सर्वोपरि है। क्योंकि मीराबाई ने कृषणभक्ति के माध्यम से तत्कालीन समाज की रूढ़ियों, परम्पराओं एवं झूठे मिथ्याडम्बरों का तीव्र विरोध किया है। साथ ही समाज में एक सन्देश

भी छोड़ा है कि नारी आत्मविश्वास एवं कर्म के सहारे कुछ भी करने में समर्थ है। मीराबाई ने काशी के सन्त रविदास को गुरू के रूप में स्वीकार कर भेद–भाव एवं जाँति–पाँति को चुनौती दी है। वहीं दूसरी ओर 'मेरौ तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई। जाकै सिर मोर मुकुट मेरौ पति सोई।।' कहकर अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को सार्थक अभिव्यक्ति दी है।

स्पष्ट है कि स्त्री भी पुरूष की भाँति समाज को बदलने एवं आगे बढ़ाने में समर्थ है। जिस स्त्री –विमर्श की बात आज चारों ओर साहित्य में हो रही है निश्चित रूप से उसकी शुरूआत तो मध्यकालीन समय में मीराबाई ने कर ही दी थी। भक्तिकाल तक आते–आते स्त्रियों को समाज में आदर एवं सम्मान तो मिला लेकिन धार्मिक एवं रूढ़ियों की बेड़ियों ने उनको वहाँ भी जकड़े रखा।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने सीता के रूप में स्त्री को प्रस्तुत कर समाज के समक्ष सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। जिसे लोग आज भी पसंद करते हैं। सूरदास ने समस्त काव्य में राधा और कृष्ण का प्रेम आज भी लोगों के बीच प्रसिद्ध हैं यहाँ भी हम देखें तो गोपियाँ एवं राधा कृष्ण की इतनी दीवानी हैं कि वे सभी के सामने अपने प्रेम का इजहार करने से नहीं चूकती है। इतनला होने के बाद भी उस समय समाज में स्त्री शिक्षा की न्यूनता, बाल विवाह, अनमेल विवाह, विधवा विवाह का विरोध आदि कुप्रथायों से नारी जीवन नरक बनकर रह गया। रीतिकाल तक आते–आते स्त्री फिर भोग की वस्तु बनी। इस समय के अधिकांश कवियों (बिहारी एवं धनानन्द आदि) ने स्त्री के केवल सौन्दर्य का ही अवलोकन किया। इनकी दृष्टि से नारी केवल प्रेम सौन्दर्य एवं भोग की वस्तु है। रीतिकाल में वृन्द, रहीम, रसखान एवं वैताल आदि ने अवश्य स्त्री–पुरूष को समान दृष्टि से देखा। इन्होंने बुरे की सदैव निन्दा एवं अच्छे की सदैव प्रशंसा की है चाहे पुरूष हो या स्त्री।

आधुनिक काल में आकर धीरे–धीरे स्त्रियों के प्रति कवियों की दृष्टि में हर प्रकार से परिवर्तन दिखायी दिया। इस समय की राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक एवं राष्ट्रीय भावना ने स्त्री को सम्मान के शिखर पर आगे बढ़ने के लिए मार्ग प्रशस्त किया। भारतेन्दु युग का समय गुलामी का समय था। इस समय समाज का प्रत्येक व्यक्ति चाहे स्त्री हो या पुरूष आजादी की जंग में सहर्ष कूद रहा था। इतना ही नहीं सभी बिना किसी भेद–भाव के कन्धे से कन्धा मिलाकर संघर्षरत थे। भारतेन्दु के कवियों (प्रताप नारायण मिश्र एवं भारेन्तेदु आदि) ने समाज में फैली कुरीतियों एवं रूढ़ियों जैसे बाल विवाह, स्त्री शिक्षा की कमी आदि का जमकर विरोध किया। द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों – मैथिलीशरण गुप्त एवं अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध आदि कवियों ने अपने काव्य में स्त्रियों को वह स्थान दिलाया है जो उसे समाज के सर्वोच्च पद पर आसीन करता है। मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत में उर्मिला एवं सीता को समाज सेविका के रूप में प्रस्तुत करके महान संदेश दिया है। उर्मिला जहाँ त्याग, करूणा, दया एवं आत्म संयम की साक्षात् देवी है वहीं सीता दया, प्रेम, करूणा, एवं लोक सेविका का जीवित प्रतिबिम्ब है। साकेत में जब उर्मिला अपने को समझाते हुए कहती है कि–''हे मन! तू प्रिय पथ का विध्न न बन।''तो इससे उत्तम आत्मसंयम का उदाहरण और क्या हो सकता है? क्या यह आत्म संयम किसी भी बात में पुरूष से कम है? उत्तर होगा नहीं। ठीक उसी प्रकार हरिऔध की कविता पवन दूतिका में राधा वायु को अपना दूत बनाकर जब कृष्ण के पास भेजती है तो उसे समझाती है कि रास्ते में थके श्रमिक, स्त्री श्रमिक, किसान एवं पशु–पक्षी मिलें तो उनके पास धीरे–धीरे बहना एवं उन्हें शीतलता प्रदान करना उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचे। इससे अधिक करूणा, संवेदना एवं दया और कहाँ मिलेगी।

जाते–जाते अगर पथ में क्लान्त कोई दिखावे। तो जाके सन्निकट उसकी क्लान्तियों को मिटाना।।

हिनि साहित्य के छायावादी युग के विषय में विद्वानों का मानना था कि छायावादियों के लिये स्त्री केवल सौन्दर्य प्रेम एवं कल्पना का साधन हैं। यह नितान्त अनुचित एवं निराधार है। इस समय ऐसे अनेक कवि एवं लेखक हुए जिन्होंने स्त्री को समाज में बहुत ही सम्मान एवं महत्व की दृष्टि से देखा। इसका अर्थ है कि छायावाद के समय स्त्री को बहुत उदात्त रूप में स्थापित किया गया। सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की सरोज स्मृति, महादेवी वर्मा का समस्त रचना उन्हें वर्तमान समय में आधुनिक मीरा की संज्ञा से सुशोभित करता है। पन्त एवं प्रसाद ने भी नारी को अपनी बुद्धि एवं विवेक के अनुसार महिमा मण्डित करके समाज पर उपकार ही किया है। प्रसाद की कामायनी में जब मनु जीवन से निराश एवं हताश होता है तब श्रद्धा ही उसकी सहचारी बनकर उसे निराशा के गर्त से बाहर निकालने का कार्य करती है। वही समझाती है कि दुःख–सुख हानि–लाभ, जीवन–मरण आदि–अन्त, यश–अपयश, जय–पराजय यह तो प्रकृति का शाश्वत नियम है। इसे त्यागकर मेरी दया, ममता एवं सानिध्य को गृहण और संसार का पुनः निर्माण करो।

दूसरी ओर प्रेमचन्द के समकालीन लेखकों ने अपने–अपने उपन्यासों एवं नाटकों के माध्यम से दहेज प्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, बेश्यावृत्ति, विधवा–विवाह का विरोध एवं राजनैतिक एवं सामाजिक रूप से नारी शोषण को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। प्रेमचन्द्र के गोदान, निर्मला, गबन, कर्मभूमि आदि। प्रसाद के चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, तितली, कंकाल आदि इसका जीता जागता उदाहरण हैं। जिसमें स्त्री के प्रति होने वाले उपरोक्त अत्याचारों का खुलकर विरोध किया है।

प्रगतिवादी युग में नागार्जुन, रामेश्वर शुक्ल अंचल शिवमंगल सिंह सुमन आदि कवियों ने अपनी लेखनी एवं कुशाग्र बुद्धि के द्वारा अपने उपन्यासों एवं कविताओं में नारी के शोषण के खिलाफ आवाज ही नहीं उठायी बल्कि इसके खिलाफ आन्दोलन छेड़ने की वकालत भी की है। इसका मतलब है कि प्रगतिवादी कवि समस्याओं को उठाकर ही नहीं छोड़ते बल्कि उनका समाधान भी बताते हैं। रतिनाथ की चाची उपन्यास में चाची अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को सहते हुए हर दुःख–मुसीवत में गाँव–वालों की सेवा निःस्वार्थ भाव से करती है। चाहे कोई उसका शत्रु हो या मित्र। वह किसी में भेद नहीं करती। इसके साथ ही नई पौध उपन्यास में अनमेल विवाह की समस्या को उठाते हैं और उसका समाधान युवा वर्ग के माध्यम से करने का प्रयास करते हैं। पन्त ने युगवाणी संग्रह की कविता 'स्वतंत्रता की पुकार' के द्वारा नारी स्वतन्त्रता की आवाज बुलन्द की है –उसका मुख जग का प्रकाश हो उठे अंध अवगुंठन, उसे मानवी का गौरवपूर्ण स्वत्व हो नूतन,।

नई कविता एवं आज की कविता तक आते–आते स्त्री–लेखन की अपनी एक अलग पहचान बन गई है। वह अपनी लेखनी द्वारा अपने जीवन में घटित यथार्थ को बड़ी साफगोई से बयाँकर रही है। चाहे प्रभाखेतान हों, चित्रा मुहगल हों, मन्नू भण्डारी, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा आदि। सभी ने अपने जीवन एवं समाज के सम्बन्धों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। सच्चाई यही है कि यदि स्त्री का दर्द अनुभव करना है या जानना है तो आपको उस जिन्दगी को स्वयं जीना पड़ेगा। यदि ऐसा नहीं करते तो वे हकीकत न होकर केवल लोगों के मनोरंजन का साधन बनकर रह जायेगा।

संदर्भ संदर्भ ग्रन्थ

- दि संडे राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र दिल्ली, नोएडा, देहरादून से प्रकाशित उत्तराखण्ड संस्करण, 2011 लेख–सृजन संसार के अंतर्गत, डॉ अमित शुक्ल, रीवा,मप्र.
- महिला सशक्तिकरण, भाग 1, संपादक, डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव, ओमेगा पब्लिकेशन दरियागंज, नई दिल्ली,2010
- महिला सशक्तीकरण दशा एवं दिशा, संपादक–अखिलेश शुक्ला, गायत्री पब्लिकेशन रीवा, पृष्ठ – 519
- आउटलुक, पाठक साहित्य सर्वे मासिक पत्रिका जनवरी 2011 सफदरजंग, नई दिल्ली
- स्त्री परम्परा और आधुनिकता– सं0 रजाकिशोर, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली,संस्करण 2004,
- उत्तर प्रदेश जनवरी, 1998, अपने भीतर का समय– मैत्रेयी, पुष्पा
- भारतीय नारी, दशा दिशा, आशारानी व्होरा
- स्त्रीवादी विमर्श– समाज और साहित्य– क्षमा शर्मा,
- स्त्री उपेक्षिता– सीमोन द वोउवा, प्रस्तुति डॉ0 प्रभा खेतान, संस्करण–2002, हिन्द पाकेट बुक्स, प्रा0लि0 नई दिल्ली।
- मिलकर मांगेगे तो आकाश मिलेगा– पद्मजा शर्मा, प्रसंग पत्रिका, अंक 16 संस्मरण अंक, सम्पादक शम्भु बादल
- कविता का कहानीपन, अनामिका वागर्थ, मार्च 2006, सं0 रवीन्द्र कालिया
- स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ0 राजनारायण

Copyright © 2018, Saheen Khan & Prof. (Dr.) D.R. Rahul. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.